Reg. No. : N-1316/2014-15

ISSN 2394-2207
November, 2023 - April 2024
Vol. X, No. I
IIJ Impact Factor : 5.01

उन्मेष

Unmesh

An International Half Yearly
Peer Reviewed Refereed Research Journal
(Arts & Humanities)

प्रधान सम्पादक

डॉ० राधेश्याम मौर्य

सम्पादक

डॉ० शिवेन्द्र कुमार मौर्य

प्रकाशक : जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान, प्रतापगढ़, उ०प्र०

उन्मेष Unmesh - ISSN 2394-2207

IIJ Impact Factor : 5.01
Vol. : X, No. I
November, 2023-April, 2024

Index

- हबीब तनवीर के नाटकों में लोक का समन्वय 1–3
  डॉ० ऋतु रानी
- बुद्ध निर्वाण का संत कबीर दर्शन में स्वरूप 4–6
  अजय कुमार सिंह
- सद्धर्म के प्रचार में बुद्धकालीन उपासिकाओं का योगदान 7–10
  डॉ० मोनिका रानी
- अशोक कालीन संस्कृति की एक झलक 11–12
  डॉ० अरविन्द त्रिपाठी
- डॉ० अम्बेडकर एवं गाँधी के विचारों की प्रासंगिकता : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 13–15
  डॉ० बबलु दास
- भारतीय सिनेमा और महिला सशक्तिकरण 16–19
  डॉ० धीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
- महिलाओं के लिए आत्मनिर्भर योजनाएँ : आर्थिक चुनौतियों का समाधान 20–24
  प्राची आदित्य
- शिवपूजन सहाय के कतित्व में लोक–जीवन 25–28
  उमेश सिंह
- हरिवंश राय बच्चन की कविताओं में मानवीय संवेदना 29–31
  सोनी त्रिपाठी
- महिलाओं के विरुद्ध घरेलू हिंसा के संदर्भ में विश्लेषणात्मक अध्ययन 32–33
  सुमित्रा कुमारी
- बाजारवाद के तलछट को काटती–छाँटती हुई कविताएँ 34–37
  प्रो० चंद्रकांत सिंह
- प्रेमचंद के उपन्यासों में राष्ट्रीय चेतना 38–41
  डॉ० अशोक कुमार सिन्हा
- राहुल सांकृत्यायन के उपन्यासों में बौद्धधर्म के आयाम 42–45
  प्रशांत कुमार
- बालिका शिक्षा को राह प्रदान करते कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय 46–50
  डॉ० अरविंद कुमार
- 'एक पति के नोट्स' और 'देवीशंकर अवस्थी' की आलोचना का विवेक 51–53
  उदय शंकर
- बीसवीं सदी के अन्तिम दशक में दलित जीवन का हिन्दी साहित्य में चित्रण 54–55
  डॉ० संतोष कुमार
- काशीनाथ सिंह की कहानियाँ : एक विहंगम दृष्टि 56–59
  संजय सिंह

उन्मेष Unmesh - ISSN 2394-2207

Impact Factor : 5.01
Vol. : X, No. 1,
November, 2023-April, 2024
Pg. No. 34-37

बाजारवाद के तलछट को काटती–छाँटती हुई कविताएँ

प्रो0 चंद्रकांत सिंह*

*प्रोफेसर, हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, धौलाधार परिसर–01, जिला–काँगड़ा, हिमाचल प्रदेश–176215

सारांश– समकालीन हिंदी कविता आठवें दशक से प्रारंभ होकर अब तक सदानीरा नदी की भाँति प्रवाहमान है। समय और काल की इस अनन्त यात्रा में समकालीन हिंदी कविता ने कई बड़े कार्य किए हैं जो लोक, संस्कृति, मानव–समाज के लिए आवश्यक हैं। इन्हीं कार्यों में एक महत्वपूर्ण कार्य है बाजारवाद की तलहटी को काटने–छाँटने का कार्य। उदारीकरण एवं बाजारवाद के कारण समूचा विश्व बड़ी मंडी में बदला किन्तु इसके बीच आम–आदमी की भावनाएँ, आकांक्षाएँ तिरोहित हुईं और पता भी न लगा। स्त्री देह के विज्ञापन, नदियों के दोहन एवं विकास के नाम पर गाँवों की कटती हुई सीमा रेखा इस बात का प्रमाण है कि पूरी भौगोलिक संरचना को बाजार ने नाभिनाल जकड़ रखा है। प्रस्तुत आलेख में इसे परखने का कार्य किया गया है। वैश्वीकरण की तेज आँधी ने किस तरह मानव–समाज को प्रभावित किया? संस्कृति एवं सभ्यता के रूप किस तरह बदले और हर चीज देखते–देखते बाजारवाद का विषय हो गयी ? इसे प्रस्तुत आलेख में समकालीन हिंदी कविता के द्वारा देखने का प्रयास हुआ है। समकालीन कवियों ने तत्कालीन मानव जीवन को जिस तरह देखा है, जिस तरह संस्कृति के रूप बदले हैं, कलाओं और मूल्यों को जिस तेजी के साथ विरूपित किया गया है, उन सभी को प्रस्तुत आलेख में कविताओं के माध्यम से समझने का प्रयास किया गया है।

बीज शब्द– उदारीकरण, आर्थिक साम्राज्यवाद, अवसाद,अनास्था, ग्राम्य–गीत, सहजीवन, विलोपन।

वैश्वीकरण के बाद समूचा विश्व बाजार व्यवस्था के अंतर्विरोधों के बीच विकसित हुआ। इन्हीं अंतर्विरोधों को समकालीन हिन्दी कविता ने नए ढंग से व्याख्यायित किया। इस आभासी एवं प्रकीर्णित रूप के खतरे अधिक रहे जिसे सामान्य तौर पर लोगों ने अनदेखा किया। किन्तु प्रतिरोध की सार्थक प्रतिधारा होने के कारण समकालीन हिंदी कविता ने इसे बहुत स्पष्ट ढंग से व्यक्त करने का कार्य किया है। वैश्वीकरण ने आर्थिक उदारीकरण, पूँजी के अथाह प्रसार आदि के द्वारा विश्व भर में आर्थिक साम्राज्यवाद की जो लहर उत्पन्न की, उसकी सार्थक पड़ताल आवश्यक है। समग्र विवेचन के बिना वैश्वीकरण की जो भी आंशिक प्रतीति होगी वह अधूरी एवं एकांगी ही होगी। वैश्वीकरण के कारण प्रतियोगी बाजार अबाध गति के साथ बढ़े किन्तु छोटे बाजार लगभग मृतप्राय हो गये। बड़ी सभ्यताओं को आत्मसात करते हुए संस्कृतियों के विशद रूप एक जगह इकट्ठे हुए किन्तु जीवन–रस से पूर्ण छोटी परम्पराएँ क्रमिक रूप से तिरोहित होती गयीं। यदि यह कहें कि बड़े समुद्र ने छोटी नदियों एवं गोमुख आदि को निगल लिया तो अतिरंजना नहीं होगी। प्रगति की बेमानी दौड़ में वैश्वीकरण के कारण गलाकाट प्रतियोगिताओं का उभार हुआ और हाशिए की आवाजें, ग्रामीण लोक, भाषायी अस्मिता आदि का विलोपन अत्यंत दुःखद है।समकालीन हिन्दी कविता इस मायने में महत्वपूर्ण है कि वह आर्थिक तानाशाही की खोखली अधिरचना को झकझोरती है। समकालीन हिन्दी कविता के प्रखर कवि राजेश जोशी 'जहर के बारे में कुछ बेतरतीब पंक्तियाँ' नामक कविता में वर्चस्वशील व्यवस्था पर कड़ा प्रहार करते हैं। साम्राज्यवाद की इस अंधी राजनीति पर बात करते हुए वह स्पष्ट लिखते हैं कि–

सत्ताएँ इस जहर के बारे में बहुत अच्छी तरह **जानती हैं/और इसका उपयोग करने** में हुनर मंद **होती हैं/धीमे जहर कीयह तासीर** होती है/कि **वह बहुत धीरे–धीरे खत्म करता है जीवन** को/क्या **इस तर्क के आधार पर/समय को एक** धीमा जहर **कहा जा सकता है ?**[1]

नब्बे के दशक के बाद विश्वभर में आर्थिक मंडियाँ दिखती हैं जिन्होंने धीमे–धीमे ग्रामीण निकायों को निगलना आरम्भ कर दिया। परिणामतः लघु व्यवस्थाओं का परिसीमन हुआ और बाजार से साधारण से लगने वाले जीवन को औचक गायब कर दिया। रोते–कलपते हुए मनुष्यों की निरीह आवाजों के साथ हृदय में गहरे बैठी हुई उदासी एवं अवसादग्रस्तता को देखना–समझना होगा। व्यवस्था–परिवर्तन की इस अंधी तलहटी में न जाने कितने मासूमों की व्यथा–कथा दर्ज है।कवि कुमार अम्बुज 'अनंतिम' नामक कविता–संग्रह में इस दैन्यता को उद्घाटित करते हुए लिखते हैं–

इतनी ज्यादा मुश्किलें हैं जिनमें जीवित हैं लोग करोड़ों लोग गरीबी के नर्क में हैं/करोड़ों बच्चे झुलस रहे हैं फैक्ट्रियों में/करोड़ों स्त्रियाँ जर्जर शोकमय शरीरों में मुसकरा रही हैं/अदृश्य सुखों की प्रतीक्षा में हाड़ तोड़ रहे हैं करोड़ों लोग/जो भी मुश्किलें हैं वे करोड़ों की गिनती में हैं/और नामुमकिन सा ही है उनका बयान।[2]

समय का अनपेक्षित दबाव हिंदी कविता पर आज कुछ अधिक है, हिंदी कविता समय की हर चाप को अंक में धारण करती हुई सतत प्रवाहमान है। बाजार का यह प्रतिरूप पहले की भाँति सरल नहीं है जिसका विश्लेषण दो टूक हो सके। पहले जीवन राग आधारित था, सामूहिक सह अस्तित्व पर